सभापति का भाषण

इण्डियन नेशनल काँग्रेस

तिरपनवाँ अधिवेशन

रामगढ़, मार्च १९४०

मौलाना अबुल कलाम आज़ाद

दोस्तो !

सन् १९२३ मे आपने मुझे इस राष्ट्रीय महासभा का सभापति चुना था। अब १७ साल के बाद दोबारा आपने मुझे यह इज्जत बख्शी हैं। कौमो की जिन्दगी मे या उनके सघर्ष के इतिहास मे १७ साल कोई बडा समय नही है। लेकिन दुनिया मे इतनी तेजी के साथ तब्दीलियाँ हो रही है कि अब समय के पुराने अन्दाजे काम नही दे सकते। इन १७ साल के अन्दर एक दूसरे के बाद बहुत सी मजिले हमारे सामने आती रहीं। हमारी यात्रा लम्बी थी और हमारा बहुत सी मजिलो से होकर गुजरना जरूरी था। हम हर मजिल मे ठहरे, किन्तु कही रुके नही। हमने हर मुकाम को देखा भाला मगर हमारा दिल कही भी अटका नही। तरह तरह के उतार चढाव हमारे सामने आए किन्तु हर हालत मे हमारी दृष्टि आगे ही की ओर रही। दुनिया को हमारे इरादो के विषय मे सन्देह भले ही रहे हो किन्तु हमे अपने फैसलो के उचित होने मे कभी सन्देह नही हुआ। हमारा मार्ग कण्टको से भरा था। हमारे सामने पग पग पर बडी बडी रुकावटे थी। हम जितनी तेजी से चलना चाहते थे नही चल सके। लेकिन हमने अपनी शक्ति भर आगे बढने मे कभी कसर नही की। अगर हम सन् १९२३ और सन् १९४० के बीच की यात्रा पर नजर डाले तो हमे अपने पीछे, बहुत दूर, एक धुधला सा निशान दिखाई देता है। सन् २३ मे हम अपनी मजिले मकसूद यानी अपने लक्ष्य की ओर बढना चाहते थे। मगर वह मजिल हमसे इतनी दूर थी कि उस तक पहुँचने के मार्ग का निशान भी हमारी आँखो से ओझल था। लेकिन आज नजर उठाइये और सामने की तरफ देखिये—न केवल मार्ग का निशान ही साफ साफ दिखाई दे रहा है बल्कि खुद मजिल भी दूर नही है। हाँ ! यह जाहिर है कि ज्यो ज्यो मजिल निकट आती जाती है हमारे प्रयत्नो की परीक्षा भी बढती जाती है। आज नित्य नई घटनाओ ने जहाँ हमे पिछले निशानो से दूर और आखिरी मजिल (लक्ष्य) के नज-

दीक लाकर खडा कर दिया है वहाँ इन्ही घटनाओ ने तरह तरह की नई नई उलझने और मुश्किले भी पैदा कर दी है, और एक बहुत ही नाजुक परिस्थिति, एक अत्यत सकटपूर्ण मार्ग से इस समय हमारा कौमी काफला गुजर रहा है। इस तरह की नाजुक परिस्थितियो की सबसे बडी विशेषता यह होती है कि उनमे आगे के लिये एक दूसरे के विरुद्ध सभावनाए दिखाई देती है। बहुत सभव है कि एक ठीक कदम हमे अपने लक्ष्य के बिलकुल पास पहुँचा दे और यह भी सभव है कि एक गलत कदम हमे तरह तरह की नई मुश्किलो मे फँसा दे। ऐसे नाजुक समय मे आपने मुझे सभापति चुनकर मुझपर जिस भरोसे का सबूत दिया है वह निस्सदेह बडे से बडा भरोसा है जो देश-सेवा के मार्ग मे आप अपने किसी भी साथी पर कर सकते थे। यह बहुत बडी इज्जत है। इसीलिये यह बहुत बडी जिम्मेदारी है। मै इस इज्जत के लिये शुक्रगुजार हूँ और जिम्मेदारी के लिये आपके सहयोग का सहारा चाहता हूँ। मुझे विश्वास है कि जिस उत्साह के साथ आपने मुझ पर इस भरोसे को प्रकट किया है उसी उत्साह के साथ आप सब का सहयोग भी मुझे मिलता रहेगा।

इस समय का असली सवाल

अब मै समझता हूँ मुझे बिना किसी भूमिका के समय के असली सवाल पर आ जाना चाहिये।

हमारे लिये समय का सबसे पहला और सबसे बडा सवाल यह है कि ३ सितम्बर सन् १९३९ के जग के एलान के बाद हमने जो कदम उठाया है वह किस तरफ जा रहा है और इस समय हम कहाँ खडे है।

शायद कॉग्रेस के इतिहास मे उसके मानसिक चित्र का यह एक नया रग था कि सन् १९३६ की लखनऊ की बैठक मे यूरोप की अन्तर्राष्ट्रीय (इण्टरनैशनल) परिस्थिति, पर एक लम्बा प्रस्ताव मजूर करके कॉग्रेस ने अपने नुक्ते ख्याल, अपने दृष्टिकोण का साफ साफ एलान कर दिया, और उस समय से ही वह प्रस्ताव

कॉंग्रेस के सालाना एलानो का एक महत्त्वपूर्ण और जरूरी हिस्सा बन गया। मानो इस बारे मे हमारा वह एक सोचा समझा फैसला था जो हमने दुनिया के सामने रख दिया।

इन प्रस्तावो के जरिये हमने दुनिया के सामने एक साथ दो बातो का एलान किया था—

सबसे पहली बात जिसे मै भारतीय राजनीति का एक नया रग कहता हूँ हमारा यह अनुभव करना था कि हम अपनी आजकल की बेबसी की हालत मे भी शेष ससार की राजनैतिक परिस्थिति से अलग नही रह सकते। आवश्यक है कि हम अपने लिये भविष्य का मार्ग बनाते हुए भी केवल अपने ही चारो ओर न देखे, बल्कि बाहर की दुनिया पर भी बराबर नजर रक्खे। समय के अनन्त परिवर्तनो ने मुल्को और कौमो को इस तरह एक दूसरे के नजदीक कर दिया है और विचारो और क्रियाओ की लहरे दुनिया के एक कोने से उठकर इस तेजी के साथ दूसरे कोनो पर असर डालना शुरु कर देती है कि आजकल की अवस्था मे यह असभव है कि हिन्दुस्तान अपने प्रश्नो को सिर्फ अपनी चहार दीवारी के अन्दर बन्द रहकर सोच सके और हल कर सके। असभव है कि बाहर के हालात हमारी हालत पर तुरन्त असर न डाले, और असभव है कि हमारी अपनी हालतो और हमारे फैसलो से दुनिया की हालतो और दुनिया के फैसलो पर असर न पडे। लखनऊ का प्रस्ताव हमारे इस बात को अनुभव कर लेने का ही नतीजा था। उन प्रस्तावो के जरिये हमने एलान किया कि यूरोप मे डेमोक्रेसी यानी जनतत्र के और व्यक्तिगत और राष्ट्रीय स्वाधीनता के विरुद्ध, दुनिया को पीछे की ओर घसीटनेवाली, फासी-इज्म और नाजीइज्म की जो तहरीके दिन बदिन जोर पकडती जा रही है हिन्दुस्तान उन्हे दुनिया की तरक्की और शान्ति के लिये एक विश्वव्यापी आपत्ति समझता है और उसका दिल और दिमाग उन कौमो के साथ है जो कौमे जनतत्र और आजादी की रक्षा के लिये इन तहरीको का मुकावला कर रही है।

लेकिन जब कि हमारा दिमाग फासीइज्म और नाजीइज्म के खतरो की ओर जा रहा था तो असभव था कि हम उस पुराने खतरे को भूल जाते जो इन नई

ताकतो से कही बढकर दुनिया की शान्ति और आजादी के लिये घातक साबित हो चुका है और जिसने सचमुच दुनिया को पीछे घसीटनेवाली (रिएक्शनरी) इन नई तहरीको के पैदा होने के लिये सारी सामग्री जमा कर दी है। मेरा मतलब ब्रिटिश साम्राज्य की ताकत से है। इसे हम उन नई रिएक्शनरी ताकतो की तरह दूर से नही देख रहे है। यह स्वय हमारे घर पर कब्जा जमाए हमारे सामने खडी है। इसलिये हमने साफ साफ शब्दो मे यह बात भी खोल दी कि अगर यूरोप के इन नए झगडो ने लडाई का रूप धारण कर लिया तो हिन्दुस्तान जो आजादी के साथ इरादा करने और अपने लिये स्वय अपना मार्ग पसन्द करने से वचित कर दिया गया है उस लडाई मे कोई हिस्सा न लेगा। हिन्दुस्तान केवल उसी हालत मे हिस्सा ले सकता है जब कि उसे अपनी आजाद मरजी और आजाद राय से फैसला करने का अधिकार हो। वह नाजीइज्म और फासीइज्म से बेजार है किन्तु उसमे भी ज्यादा वह ब्रिटिश साम्राज्य से बेजार है। यदि हिन्दुस्तान आजादी के अपने जन्म सिद्ध अधिकार से वचित रहता है तो इसके साफ साफ माइने यह है कि ब्रिटिश साम्राज्य अपने तमाम परम्परागत व्यवहार के साथ जीवित है, और हमारा मुल्क किसी हालत मे भी इस बात के लिये तैयार नही है कि ब्रिटिश साम्राज्य की विजयो मे मदद दे। यह दूसरी बात थी जिसका हमारे प्रस्ताव बराबर एलान करते रहे।

ये प्रस्ताव लखनऊ कॉग्रेस से लेकर अगस्त सन् १९३९ तक मजूर होते रहे और "लडाई के प्रस्तावो" के नाम से मशहूर है।

जबकि अचानक अगस्त सन् १९३९ के तीसरे सप्ताह मे लडाई के बादल गरजने लगे और ३ सितम्बर को लडाई शुरू हो गई उस समय कॉग्रेस के ये सब प्रस्ताव ब्रिटिश गवरमेट के सामने थे।

अब मै इस मौके पर एक मिनट के लिये आपको आगे बढने से रोकूँगा और प्रार्थना करूँगा कि जरा पीछे मुड कर देखिये। अगस्त सन् ३९ के महीने को आपने किस परिस्थिति मे छोडा है?

ब्रिटिश गवरमेट ने 'गवरमेट आफ इडिया एक्ट सन् ३५' जबरदस्ती हिन्दु-

स्तान के सर मढा और सदा के अनुसार दुनिया को यह विश्वास दिलाने की कोशिश की कि इगलिस्तान ने हिन्दुस्तान को उसके कौमी अधिकार की एक बहुत बडी किस्त अदा कर दी। कॉग्रेस का फैसला इस विषय मे दुनिया को मालूम है। फिर भी कॉग्रेस ने कुछ समय के लिये रुके रहने और दम लेने का इरादा किया। कॉग्रेस इस पर राजी होगई कि एक खास शर्त के साथ वजारते लेना स्वीकार कर ले। ग्यारह सूबो मे से आठ मे कॉग्रेस की वजारते सफलता के साथ काम कर रही थी। यह बात स्वय ब्रिटिश सरकार के हक मे फायदे की थी कि जितनी देर तक मुमकिन हो सके वह इस परिस्थिति को कायम रक्खे। इस परिस्थिति का एक दूसरा पहलू भी था। वह यह कि जहाँ तक लडाई की ऊपरी मूरत का सबध है हिन्दुस्तान साफ शब्दो मे नाजी जरमनी से अपनी बेजारी का एलान कर चुका था। उसकी हमदर्दी जनतत्र यानी डेमोक्रेसी का पक्ष लेनेवाली कौमो के साथ थी और यह पहलू भी ब्रिटिश गवरमेट के हक मे था। ऐसी हालत मे कुदरती तौर पर यह आशा की जा सकती थी कि अगर ब्रिटिश गवरमेट की पुरानी साम्राज्य प्रेमी मनोवृत्ति मे कुछ भी परिवर्तन हुआ है तो कम से कम ऊपरी दिखावे (डिप्लोमेसी) ही की खातिर वह जरूर इस बात की आवश्यकता अनुभव करेगी कि इस अवसर पर अपना पुराना ढग बदल दे और हिन्दुस्तान को यह अनुभव करने का मौका दे कि अब हिन्दुस्तान एक नए बदले हुए वायुमडल मे साँस ले रहा है। लेकिन हम सबको मालूम है कि इस अवसर पर ब्रिटिश गवरमेट का व्यवहार कैसा रहा! हृदय परिवर्तन की कोई जरा सी परछाही भी उस पर पडती हुई दिखाई नही दी। ठीक उसी तरह जैसा कि १५० साल तक उसकी साम्राज्य प्रेमी प्रकृति का ढग रहा है उसने अपने तर्जे अमल, अपने व्यवहार, का फैसला कर लिया और बिना इसके कि किसी रूप मे या किसी दरजे तक भी हिन्दुस्तान को अपनी राय जाहिर करने का मौका दे उसने हिन्दुस्तान के लडाई मे शामिल हो जाने का खुद ही एलान कर दिया। इस बात तक की जरूरत महसूस नही की गई कि उन चुनी हुई असेम्बलियो ही को अपनी राय जाहिर करने का मौका दे दिया जाता जिन्हे खुद ब्रिटिश गवरमेट ने अपनी राजनैतिक उदारता का

प्रदर्शन करते हुए हिन्दुस्तान के सिर थोपा है ।

हमे मालूम है, और सारी दुनिया को मालूम है, कि इस अवसर पर ब्रिटिश साम्राज्य के और सब मुल्को को अपने अपने व्यवहार, अपने अपने तर्जे अमल, के फैसले का मौका दिया गया था। कनेडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, दक्खिन अफरीका, आयरलैण्ड सबने लडाई मे शरीक होने न होने का फैसला अपनी अपनी धारा सभाओ मे बिना किसी बाहरी हस्तक्षेप के स्वय किया। इतना ही नही बल्कि आयरलैण्ड ने जग मे शरीक होने के स्थान पर तटस्थ रहने का फैसला किया और आयरलैण्ड के इस फैसले पर इगलिस्तान के किसी बाशिन्दे को आश्चर्य नही हुआ। मिस्टर डी वेलरा ने ब्रिटेन के साए मे खडे होकर साफ साफ कह दिया कि जब तक अलसटर के प्रश्न का सन्तोषजनक निबटारा नही होता तब तक आयरलैण्ड लडाई मे ब्रिटेन की मदद करने से इनकार करता है ।

लेकिन ब्रिटिश साम्राज्य मे हिन्दुस्तान की जगह कहाँ है ? जिस हिन्दुस्तान को आज यह कीमती खुशखबरी सुनाई जा रही है कि उसे ब्रिटिश सरकार के उदार हाथो से जल्दी ही—किन्तु किसी को नही मालूम कि कब—एक ब्रिटिश डोमीनियन या ब्रिटिश उपनिवेश का पूरा रुतबा (स्टेटस) मिलनेवाला है उसके अस्तित्व को किस तरह स्वीकार किया गया ? इस तरह कि उस लडाई के अन्दर, जो ससार के इतिहास मे शायद सबसे बडी, सबसे भयकर, लडाई होगी, हिन्दुस्तान को अचानक ढकेल दिया गया, यहाँ तक कि हिन्दुस्तान को पता भी न चला कि वह लडाई मे शरीक हो रहा है ।

केवल एक इसी घटना से हम ब्रिटिश गवरमेट के आजकल के मिजाज और उसके रुख को उसके असली रग रूप मे देख सकते है। किन्तु, नही, हमे जल्दी नही करना चाहिये। और भी मौके हमारे सामने आने वाले है। वह समय दूर नही है जब कि हम ब्रिटिश गवरमेट को और अधिक निकट से और और अधिक बेपरदा देखने लगेगे ।

सन् १९१४ की लडाई की पहली चिनगारी बलकान के एक कोने मे सुलगी

थी। इसलिये इगलिस्तान और फ़ास ने छोटी कौमो के अधिकारो के नारे लगाने शुरू कर दिये थे। फिर पुण्यस्मृति प्रेजिडेण्ट विल्सन के १४ प्वाइट दुनिया के सामने आए। उनका जो कुछ नतीजा हुआ दुनिया को मालूम है। इस बार परिस्थिति दूसरी थी। पिछली लडाई के बाद इगलिस्तान और फ्रास ने जीत के नशे मे जो रवइया अख्तियार किया था उसका कुदरती नतीजा यह था कि एक नई प्रतिक्रिया शुरू हो जाय। वह शुरू हुई। उसी ने इटली मे फासीइज्म और जरमनी मे नाजीइज्म का रूप लिया और पाशविक शक्ति के बल पर डिक्टेटरशिप यानी एक आदमी की अमित और अनन्य सत्ता दुनिया की शान्ति और आजादी को ललकारने लगी। जब यह परिस्थिति पैदा हुई तो स्वाभाविक था कि दो नए दल दुनिया मे एक दूसरे के आमने सामने आ खडे हो। एक जनतत्र और आजादी का साथ देनेवाला दल और दूसरा प्रतिक्रियावादी ताकतो का साथ देनेवाला। इस प्रकार लडाई का एक नया नक्शा बनना शुरू हो गया। मिस्टर चेम्बरलेन की गवरमेट, जिसके लिये फासिस्ट इटली और नाजी जरमनी से कही ज्यादा सोवियट रूस का अस्तित्व असह्य था और जो सोवियट रूस को ब्रिटिश साम्राज्य के लिये एक जिन्दा ललकार समझती थी, तीन बरस तक इस दृश्य का तमाशा देखती रही। इतना ही नही बल्कि इगलिस्तान ने अपने व्यवहार से खुले तौर पर फासिस्ट और नाजी ताकतो के हौसले बढाए। अबीसीनिया, स्पेन, आस्ट्रिया, जीकोस्लोवेकिया और अल्बानिया के अस्तित्व एक के बाद एक दुनिया के नक्शे से मिटते गये और ब्रिटिश गवरमेट ने अपनी डगमगाती हुई पालिसी से उन्हे दफन करने मे बराबर मदद दी। किन्तु जब इन बातो का कुदरती नतीजा असली रूप मे सामने आया और नाजी जरमनी का कदम बेरोक आगे बढने लगा तो ब्रिटिश गवरमेट मजबूर होगई। उसे लडाई के मैदान मे उतरना पडा। यदि अब भी न उतरती तो जरमनी की ताकत ब्रिटिश साम्राज्य के लिये असह्य हो जाती। अब छोटी कौमो की आजादी के पुराने नारे की जगह जनतत्र, स्वाधीनता और विश्वव्यापी शान्ति के नए नारे बुलन्द किये गए और तमाम दुनिया इन आवाजो से गँजने लगी। इन्ही नारो की प्रतिध्वनि मे इगलिस्तान और फ्रास ने

तीन सितम्बर को लडाई का एलान किया। और ससार की उन सब बेचैन आत्माओ ने जो यूरोप की नई प्रतिक्रियावादी ताकतो के पाशविक बलप्रयोग और विश्वव्यापी अशान्ति के दुख से हैरान और परेशान हो रही थी इन लुभावने नारो पर कान लगा दिये।

काँग्रेस की माँग

तीन सितम्बर को लडाई का एलान हुआ। सात सितम्बर को काग्रेस वर्किग कमेटी की वर्धा मे बैठक हुई। वर्किग कमेटी ने सारी परिस्थिति पर गौर किया। कॉग्रेस के वे सब एलान उसके सामने थे जो सन् ३६ से उस समय तक लगातार निकलते रहे थे। लडाई के एलान के बारे मे ब्रिटिश गवरमेट ने जो चलन अख्तियार किया था वह भी वर्किग कमेटी की निगाहो से ओझल नही था। निस्सदेह यदि वर्किग कमेटी कोई ऐसा फैसला कर देती जो उस परिस्थिति मे स्वाभाविक और न्यायानुकूल था तो कमेटी को बुरा नही कहा जा सकता था। किन्तु कमेटी ने पूरी अहतियात के साथ अपने दिल और दिमाग की निगरानी की। उसने समय के उन सब विचारो और उमगो की ओर से जो तेजी के साथ आगे बढने का आग्रह कर रही थी अपने कानो को बद कर लिया। उसने मामले के सब पहलुओ पर पूरे धीरज के साथ मनन करके वह कदम उठाया जिसके बारे मे आज हिन्दुस्तान सर उठाकर दुनिया से कह सकता है कि उस परिस्थिति मे उसके लिये वही एक ठीक कदम था। उसने अपने सारे फैसले मुलतवी कर दिये। उसने ब्रिटिश गवरमेट के सामने यह माँग पेश की कि पहले ब्रिटिश गवरमेट अपना वह फैसला दुनिया के सामने रख दे जिस पर न केवल हिन्दुस्तान का बल्कि उन सब लोगो का फैसला निर्भर है जिनका उद्देश्य सारी दुनिया की शान्ति और न्याय है। यदि हिन्दुस्तान को इस लडाई मे शरीक होने का निमत्रण दिया गया है तो हिन्दुस्तान को मालूम होना चाहिये कि यह लडाई क्यो लडी जा रही है? उसका उद्देश्य क्या है? यदि मानव सहार के इस सबसे बडे नाटक का भी वही

नतीजा निकलनेवाला नही है जो पिछली लड़ाई का निकल चुका है और यह लड़ाई यदि सचमुच इसीलिये लडी जा रही है कि आज़ादी, जनतत्र और शान्ति की एक नई व्यवस्था ससार के सामने पेश की जावे तो फिर निस्सदेह हिन्दुस्तान को यह माँग पेश करने का अधिकार है कि उसे बताया जावे कि खुद उसके भाग्य पर लडाई के इन उद्देश्यो का क्या असर पडेगा।

वर्किग कमेटी ने इस माँग को एक विस्तृत एलान की सूरत मे तैयार किया जो १४ सितम्बर को शाया हो गया। यदि मै आशा करूँ कि यह एलान हिन्दुस्तान के नए राजनैतिक इतिहास मे अपने लिये उचित स्थान चाहेगा तो मुझे विश्वास है कि मै भावी इतिहास लेखक से कोई अनुचित आशा नही कर रहा हूँ। यह एलान सच्चाई और विवेक का एक सादा किन्तु अकाट्य उल्लेख है, जिसे केवल एक सशस्त्र ताकत का घमण्ड ही बेपरवाही के साथ ठुकरा सकता है। इस एलान की आवाज यद्यपि हिन्दुस्तान मे बुलन्द हुई फिर भी वास्तव मे वह केवल हिन्दुस्तान ही की आवाज नही थी। वह विश्वव्यापी मानवता की घायल उम्मीदो की चीख थी। २५ साल पहले दुनिया बरबादी और विनाश के एक सबसे बडे काण्ड मे जिसे इतिहास की निगाहे अभी तक देख सकती है झोक दी गई थी और केवल इस लिये झोक दी गई थी ताकि उसके बाद दुनिया उससे भी अधिक भयकर हत्या काण्ड की तैयारियो मे लग जाय। निर्बल कौमो की आजादी, शान्ति की जिम्मे-दारी और आत्म निर्णय (सेल्फ डिटरमिनेशन) हथियारबन्दी की रोक थाम, अन्तर्राष्ट्रीय पचायत की स्थापना, और इसी तरह के और सब ऊँचे और लुभावने उद्देश्यो की पुकार से कौमो के कानो पर जादू किया गया। उनके दिलो मे उम्मीदे जगाई गई। किन्तु अन्त मे क्या नतीजा निकला? हर पुकार धोखा निकली। हर उम्मीद झूठी साबित हुई! हर चमत्कार स्वप्न बनकर रह गया। आज फिर कौमो को भेडो की तरह खून और आग की भयकरता मे ढकेला जा रहा है! सत्य और विवेक के अस्तित्व तक से हमे इतना अधिक निराश हो जाना चाहिये कि हम मौत और बरबादी के तूफान मे कूदने से पहले यह भी नही पूछ सकते कि यह सब क्यो हो रहा है? और स्वय हमारे भाग्य पर इसका क्या प्रभाव पडेगा?

गवरमेंट का जवाब और कॉंग्रेस का पहला क़दम

कॉग्रेस की इस मॉग के जवाब मे ब्रिटिश गवरमेट की ओर से बयानो का एक सिलसिला शुरू हो गया जो कभी हिन्दुस्तान और कभी इगलिस्तान से निकलते रहे। इस सिलसिले की पहली कडी हिन्दुस्तान के वाइसराय का वह एलान था जो १७ अक्तूबर को दिल्ली से शाया हुआ। यह एलान शायद भारतीय सरकार के सरकारी साहित्य की उलझी हुई शैली और थका देनेवाले विस्तार का सबसे अच्छा और मुकम्मिल नमूना है। इसके सफो के सफे पढ जाने के बाद मुश्किल से इस बात का पता चलता है कि लडाई के उद्देश्य के लिये इगलिस्तान के प्रधान मत्री की एक वक्तृता पढनी चाहिये जिसमे केवल यूरोप की शान्ति और यूरोप के अन्तर्राष्ट्रीय सबध के सुधार का ज़िक्र है। "जनतत्र" (डेमोक्रेसी) और "कौमो की आजादी" के शब्द इसमे ढूँढने से भी नही मिल सकते। जहॉ तक भारत का सबध है इस वक्तृता से हमे मालूम होता है कि ब्रिटिश गवरमेट ने सन् १६१६ के कानून की भूमिका मे अपनी जिस पालिसी का एलान किया था और जिसका नतीजा सन् ३५ के कानून के रूप मे निकला, आज भी वही पालिसी उसके सामने है। उससे ज्यादा ब्रिटिश गवरमेट और कुछ नही कह सकती।

१७ अक्तूबर, सन् १६३६ को वाइसराय का एलान शाया हुआ। २२ अक्तूबर को उस पर विचार करने के लिये वर्धा मे वर्किंग कमेटी की बैठक हुई। बिना किसी बहस के वर्किंग कमेटी इस नतीजे पर पहुँची कि यह जवाब उसे किसी तरह सन्तुष्ट नही कर सकता और अब उसे अपना वह फैसला बिना विलम्ब कर देना चाहिये जो उसने इस वक्त तक मुलतवी कर रक्खा था। जो फैसला कमेटी ने किया वह कमेटी के प्रस्ताव के शब्दो मे यह है—

> "जो परिस्थिति पैदा हो गई है उसमे कमेटी के लिये मुमकिन नही है कि वह ब्रिटिश गवरमेट की साम्राज्य प्रेमी पालिसी को स्वीकार कर ले। यह कमेटी कॉग्रेसी वज़ारतो को आदेश देती है कि जो मार्ग अब हमारे सामने खुल गया है उसकी ओर बढने के लिए पहला कदम हमे

यह उठाना चाहिये कि कॉग्रेसी वजीर अपने अपने सूबो की गवरमेटो से इस्तीफा दे दे।"

इसके अनुसार आठ सूबो मे वजारतो ने इस्तीफे दे दिये।

यह इस सिलसिले का प्रारम्भ था। अब देखना चाहिये कि यह सिलसिला कहाँ तक पहुँचता है। हिन्दुस्तान के वाइसराय की एक विज्ञप्ति, जो ५ फरवरी को दिल्ली से शाया हुई और जिसमे उस बातचीत का सार बयान किया गया है जो महात्मा गान्धी से वाइसराय की हुई थी और फिर स्वय महात्मा गान्धी का बयान, जो उन्होने ६ फरवरी को शाया किया, सिलसिले की आखिरी कडियाँ समझी जा सकती है। वाइसराय की विज्ञप्ति का सार हम सबको मालूम है। ब्रिटिश गवरमेट की यह पूरी इच्छा है कि भारतवर्ष जल्दी से जल्दी यानी परिस्थिति के लिहाज से जितनी जल्दी मुमकिन हो सके ब्रिटिश उपनिवेशो का रुतबा हासिल कर ले और बीच के जमाने की मुद्दत जहाँ तक मुमकिन हो कम की जाय। लेकिन अगरेज सरकार यह मानने के लिये तैयार नही है कि बिना बाहर के हस्तक्षेप के हिन्दुस्तान को अपना शासन विधान, अपना कान्स्टीट्यूशन, स्वय अपने चुने हुए प्रतिनिधियो द्वारा, बनाने का अधिकार है, और हिन्दुस्तान अपने भाग्य का स्वय फैसला कर सकता है। दूसरे शब्दो मे ब्रिटिश गवरमेट हिन्दुस्तान के लिये आत्म निर्णय यानी सेल्फ डिटरमिनेशन का हक स्वीकार नही कर सकती।

वास्तविकता के एक स्पर्शमात्र से दिखावे का सारा जादू किस तरह तितर बितर हो गया! पिछले चार वर्ष से जनतत्र और आजादी की रक्षा के नारो से दुनिया गूँज रही थी। इगलिस्तान और फ्रास की सरकारो के बडे से बडे जिम्मेदार लोग इस विषय मे जो कुछ कहते रहे है वह अभी इतना ताजा है कि उसे याद दिलाने की जरूरत नही। किन्तु ज्योही भारतवर्ष ने यह सवाल उठाया, सच्चाई को बेपरदा होकर सामने आ जाना पडा। अब हमे बताया जाता है कि कौमो की आजादी की रक्षा निस्सदेह इस लडाई का उद्देश्य है, किन्तु उसका क्षेत्र यूरोप की भौगोलिक सीमाओ से बाहर नही जा सकता। एशिया और अफरीका के बाशिन्दो

को यह दुस्साहस नही करना चाहिये कि वे भी उम्मीद की निगाहे उठाएँ। मिस्टर चेम्बरलेन ने २४ फरवरी को बर्मिंघम मे वक्तृता देते हुए यह बात और भी ज्यादा साफ कर दी है, यद्यपि उनकी वक्तृता से पहले भी हमे इस विषय मे कोई सन्देह नही था। उन्होने हमारे लिये ब्रिटिश गवरमेट के साफ साफ व्यवहार के साथ साथ साफ साफ शब्द भी मोहय्या कर दिये है। लड़ाई के ब्रिटिश उद्देश्यो का एलान करते हुए वह दुनिया को विश्वास दिलाते है कि—

"हमारी लडाई इसलिये है कि हम इस बात की जमानत ले ले कि यूरोप की छोटी कौमो की आजादी भविष्य मे अनुचित अत्याचारो की धमकियो से बिलकुल सुरक्षित रहेगी।"

ब्रिटिश गवरमेट का यह जवाब यद्यपि इस समय एक अगरेज की जबान से निकला है तो भी वास्तव मे वह कोई खास अगरेजी चीज नही है। यह जवाब समस्त यूरोपियन महाद्वीप के उन आम विचारो को ठीक ठीक प्रकट कर रहा है जो लगभग दो सौ वर्ष से दुनिया के सामने रहे है। अठारहवी और उन्नीसवी सदी मे मनुष्य की व्यक्तिगत और सामूहिक आजादी के जितने भी सिद्धात स्वीकार किये गए उन पर अमल कराने का हक केवल यूरोप की कौमो को प्राप्त है और यूरोप की कौमो मे भी यह अधिकार ईसाई यूरोप के सकीर्ण क्षेत्र से कभी बाहर न जा सका। आज बीसवी सदी के मध्य मे ससार इतना बदल चुका है कि पिछली सदी के विचारो और व्यवहारो के नक्शे इतिहास की पुरानी कहानियो की तरह सामने आते है और उन निशानो की तरह दिखाई देते है जिन्हे हम बहुत दूर पीछे छोड आए। किन्तु हमे स्वीकार करना चाहिये कि कम से कम एक निशान अब भी पीछे नही छुट सका। अभी तक वह हमारे साथ साथ चल रहा है। वह है मानव अधिकारो के लिये यूरोप के अन्दर भेदभाव का निशान।

भारत के राजनैतिक और राष्ट्रीय अधिकारो के प्रश्न ने भी हमारे सामने ठीक इसी तरह का नक्शा पेश कर दिया है। हमने जब लड़ाई के एलान के बाद यह सवाल उठाया कि लडाई का उद्देश्य क्या है और हिन्दुस्तान की किस्मत

पर उसका क्या असर पडनेवाला है तो हम इस बात से बेख़बर नही थे कि सन् १७ और सन् १६ मे ब्रिटिश गवरमेट की पालिसी क्या थी। हम जानना चाहते थे कि सन् ३६ के इस ससार मे, जो इस तेजी के साथ दौड रहा है और बदल रहा है कि दिनो के अन्दर सदियो की चाल पूरी कर रहा है, हिन्दुस्तान को ब्रिटिश गवरमेट किस निगाह से देखना चाहती है। उसका दृष्टिकोण अब भी बदला है या नही। हमे साफ जवाब मिल गया कि नही बदला। ब्रिटिश गवरमेट अब भी अपनी साम्राज्य पिपासा मे कोई परिवर्तन नही कर सकी। हमे विश्वास दिलाया जाता है कि ब्रिटिश गवरमेट इस बात की बहुत अधिक इच्छुक है कि भारतवर्ष जहाँ तक सभव हो जल्दी उपनिवेशो का रुतबा यानी डोमीनियन स्टेटस प्राप्त कर ले। हमे मालूम था कि ब्रिटिश गवरमेट अपनी यह इच्छा प्रकट कर चुकी है। अब हमे यह बात मालूम हो गई कि वह इसकी "बहुत ज्यादा इच्छुक है।" किन्तु प्रश्न ब्रिटिश गवरमेट की इच्छा और उस इच्छा के कम, ज्यादा या बहुत ज्यादा होने का नही है। साफ और सीधा प्रश्न भारतवर्ष के अधिकार का है। भारतवर्ष को यह अधिकार हासिल है या नही कि वह अपने भाग्य का स्वय फैसला कर ले? इसी एक प्रश्न के उत्तर पर इस समय के सारे प्रश्नो का उत्तर निर्भर है। भारतवर्ष के लिये यह प्रश्न नीव की असली ईट है। वह इसे हिलने नही देगा। यदि यह हिल जाय तो भारतवर्ष के कौमी अस्तित्व की सारी इमारत हिल जायगी।

जहाँ तक लडाई का सबध है हमारे लिये परिस्थिति बिलकुल साफ हो गई। हम ब्रिटिश साम्राज्य का चेहरा इस लडाई के अन्दर भी उसी तरह साफ साफ देख रहे है जिस तरह हमने पिछली लड़ाई मे देखा था और हम इस बात के लिये तय्यार नही है कि उसकी जीत के लिये लडाई मे हिस्सा ले। हमारा अभियोग बिलकुल स्पष्ट है। हम अपनी परतन्त्रता की आयु बढाने के लिये ब्रिटिश साम्राज्य को अधिक मजबूत और अधिक विजयी देखना नही चाहते। हम ऐसा करने से साफ साफ इनकार करते है। हमारा मार्ग निस्सदेह इसके ठीक विपरीत दिशा मे है।

हम आज कहाँ खड़े हैं ?

अब हम फिर उस जगह वापस आते है जहॉ से हम चले थे। हमने इस प्रश्न पर विचार करना चाहा था कि तीन सितम्बर वाले जग के एलान के बाद जो कदम हम उठा चुके है उसका रुख आगे को किस ओर है और आज हम कहॉ खडे है। मुझे विश्वास है कि इन दोनो प्रश्नो का उत्तर इस समय हममे से हर एक के दिल मे इस तरह साफ साफ उभर आया है कि अब उसे केवल जबान तक लाना बाकी है। यह जरूरी नही है कि आपके होठ हिले। मै आपके दिलो को हिलता हुआ देख रहा हूँ। अनस्थायी सहयोग (को-आपरेशन) का जो कदम सन् १९३७ मे हमने उठाया था जग के एलान के वाद हमने वह वापस ले लिया। इसलिये कुदरती तौर पर हमारा रुख अब असहयोग (नान-को-आपरेशन) की तरफ है। हम आज उसी जगह खडे है जहॉ हमे फैसला करना है कि उस रुख की ओर आगे बढे या पीछे हटे। जब कदम उठा दिया जाय तो वह रुक नही सकता। अगर रुकेगा तो पीछे हटेगा। हम पीछे हटने से इनकार करते है। हम केवल यही कर सकते है कि आगे बढे। जब मै यह एलान करता हूँ कि हम आगे बढ़ेगे तो मुझे विश्वास है कि आप सबके दिलो की आवाज मेरी आवाज के साथ मिली हुई है।

आपसी समझौता

इस सबध मे कुदरती तौर पर एक सवाल सामने आ जाता है। इतिहास हमे बताता है कि कौमो के सघर्ष मे या उनकी खीचातानी मे एक ताकत तभी अपना कब्जा छोड सकती है जब कि दूसरी ताकत उसे ऐसा करने पर विवश कर दे। विवेक और सदाचार के ऊँचे सिद्धात व्यक्तियो का व्यवहार बदलते रहेगे किन्तु अधिकार प्राप्त या प्रभुत्व प्राप्त कौमो की स्वार्थपरता पर वे कभी असर नही डाल सके। आज भी बीसवी सदी के मध्य मे हम देख रहे है कि यूरोप की नई प्रति-क्रियावादी (रिएक्शनरी) कौमो ने किस तरह मनुष्य के व्यक्तिगत और

कौमी अधिकारो के तमाम सिद्वात उलट पुलट कर दिये और न्याय और विवेक के स्थान पर केवल पाशविक बल की दलील ही फैसलो के लिये एक मात्र दलील रह गई है। किन्तु इसके साथ ही जब कि एक ओर चित्र का यह नैराश्यजनक पहलू हमारे सामने आ रहा है दूसरी ओर एक आशाजनक पहलू भी हमारे सामने है। हम देखते है कि ससार के असख्य जन समूहो की एक नई विश्व-व्यापी जाग्रति बिना रग रूप का भेद किये बडी तेजी के साथ हर तरफ बढ़ रही है। यह जाग्रति दुनिया की पुरानी व्यवस्था की बुराइयो और नामुरादियो से ऊब गई है और विवेक, न्याय और शान्ति की नीव पर एक नई व्यवस्था कायम करने के लिये बेचैन है। दुनिया की यह नई जाग्रति जिसने पिछली लड़ाई के बाद से मानव आत्माओ की गहराइयो मे करवट बदलना शुरू कर दिया था अब दिन प्रतिदिन दिमागो और ज़बानो की सतह पर उभर रही है और इस तरह उभर रही है कि शायद इतिहास मे कभी नही उभरी। ऐसी अवस्था मे क्या यह बात इमकान से बाहर थी कि इतिहास के पुराने फैसलो के विरुद्ध एक नया फैसला इतिहास मे बढाया जाता? क्या यह सभव नही था कि दुनिया की दो बडी क़ौमे जिन्हे कालचक्र ने शासक और शासित के सूत्र मे बॉध दिया था, भविष्य के लिये विवेक, न्याय और शान्ति के सूत्रो द्वारा एक नया सबध एक दूसरे के साथ जोडने के लिये तैयार हो जाती? यदि ऐसा हो सकता तो विश्वव्यापी शान्ति की ओर से निराशाएँ आशाओ के एक नए जीवन मे बदल जाती। विवेक, और न्याय के युग का नया प्रभात ससार को एक नए सूरज का सदेश देने लगता। यदि आज अगरेज कौम सर उठाकर दुनिया से कह सकती कि उसने इतिहास मे एक नई मिसाल कायम करने का सकल्प कर लिया है तो मानवता की यह कैसी अपूर्व और व्यापक विजय होती।

निस्सन्देह यह असम्भव नही है, मगर दुनिया की तमाम दुशवारियो से कही दुशवार है।

जमाने की चारो ओर फैली हुई अँधियारियो मे मानव प्रकृति का यही एक रोशन पहलू है जो महात्मा गान्धी की महान् आत्मा को कभी थकने नही देता।

वह आपसी समझौते के दरवाज़े मे, जो उनके सामने खोला जाता है, अपनी स्थिति को जरा भी निर्बल अनुभव किये बिना, निस्सकोच कदम रखने के लिये तैयार हो जाते है।

ब्रिटिश मत्रिमडल के अनेक मेंबरो ने लडाई के बाद ससार को यह विश्वास दिलाने का प्रयत्न किया है कि ब्रिटिश साम्राज्य का पिछला युग समाप्त हो चुका और आज ब्रिटिश कौम केवल शान्ति और न्याय के उद्देश्यो को अपने सामने रक्खे हुए है। हिन्दुस्तान से बढकर और कौन सा देश हो सकता है जो आज किसी ऐसे एलान का स्वागत करता? किन्तु असलीयत यह है कि इन एलानो के बावजूद ब्रिटिश साम्राज्य आज भी उसी तरह शान्ति और न्याय का मार्ग रोके खडा है जिस तरह लडाई से पहले खडा था। हिन्दुस्तान की माँग इस तरह के समस्त दावो के लिये एक सच्ची कसौटी थी। दावे कसौटी पर कसे गए और अपने सच्चे होने का हमे विश्वास न दिला सके।

हिन्दुस्तान का राजनैतिक भविष्य और अल्प संख्यक जातियाँ

जहाँ तक इस वक्त के असली सवाल का सबध है मुख्य बात केवल वही है जो मैंने थोडे से मे आपके सामन रख दी है। पिछली सितम्बर मे जग के एलान के बाद जब कॉग्रेस ने अपनी माँग तय की उस समय हममे से किसी के वहम और गुमान मे भी यह बात नही थी कि इस स्पष्ट और सीधी सादी माँग के जवाब मे, जो हिदुस्तान के नाम पर की गई है और जिससे देश के किसी फिरके और किसी गिरोह को भी मतभेद नही हो सकता, साम्प्रदायिक मसले का सवाल उठाया जा सकेगा। निस्सदेह मुल्क मे ऐसी जमाअते मौजूद है जो राजनैतिक मैदान मे वहाँ तक नही जा सकती जहाँ तक कॉग्रेस पहुँच चुकी है और जो सत्याग्रह (डायरेक्ट ऐक्शन) के उस तरीके से जिसे, राजनैतिक हिन्दुस्तान ने बहुमत से स्वीकार कर लिया है, सहमत नही है। लेकिन जहाँ तक मुल्क की आज़ादी

को और उसके जन्मसिद्ध अधिकार को स्वीकार करने का सवाल है, इस देश मे मानसिक जागृति अब इतनी बढ चुकी है कि मुल्क का कोई गिरोह भी हमारे उद्देश का विरोध करने का साहस नही कर सकता। यहाँ तक कि वे जमाअते भी जो अपनी श्रेणी विशेष (क्लास) के हको और हितो की रक्षा के लिये इस बात पर मजबूर है कि आजकल की राजनैतिक परिस्थिति मे किसी तरह की तब्दीली न चाहे वे भी जमाने की हवा से बेबस है और उन्हे भी हिन्दुस्तान के राजनैतिक लक्ष्य को स्वीकार करना पडता है। किन्तु समय की कसौटी ने जब कि परिस्थिति के दूसरे पहलुओ पर से परदा उठा दिया है वहाँ इस खास पहलू को भी हमारी नज़रो के सामने साफ जाहिर कर दिया है।

हिन्दुस्तान और इगलिस्तान दोनो मे, एक दूसरे के बाद, इस तरह की कोशिशे की गई कि हमारे इस समय के राजनैतिक सवाल को साम्प्रदायिक मसले के साथ मिलाकर उस सवाल के असली रूप को सदेह मे डाल दिया जावे। बार बार दुनिया को यकीन दिलाने की कोशिश की गई कि भारत के राजनैतिक प्रश्न के हल करने के मार्ग मे अल्प सख्यक जातियो का मसला रुकावट है।

यदि पिछले डेढ सौ वर्ष के अन्दर हिन्दुस्तान मे ब्रिटिश साम्राज्यशाही का यह तर्जे अमल रहा है कि मुल्क के बाशिन्दो के आपसी तफरको को उभारकर उन्हे नई नई पक्तियो मे बाँटा जावे और फिर उन पक्तियो को अपनी हुकूमत की मजबूती के लिये काम मे लाया जाय, तो हमारे शासको का ऐसा करना हमारी राजनैतिक पराधीनता का एक कुदरती नतीजा था और हमे इससे कोई फायदा नही हो सकता कि इसकी शिकायत करके अब हम अपने दिलो मे कडवाहट पैदा करे। निस्सदेह कोई विदेशी हुकूमत किसी मुल्क के अन्दर एकता की इच्छुक नही हो सकती। मुल्क के अदर की फूट ही विदेशी हुकूमत की मौजूदगी के लिये सबसे बडी जमानत है। लेकिन इस ज़माने मे जब कि दुनिया को यह विश्वास दिलाने की कोशिशे की जा रही है कि हिन्दुस्तान मे ब्रिटिश साम्राज्य के इतिहास का पिछला दौर समाप्त हो चुका, निस्सदेह हमारा ब्रिटिश राज-

नीतिज्ञो से यह आशा करना बहुत अधिक अनुचित नही था कि कम से कम इस एक मामले मे वह अपने व्यवहार को अपनी अब तक की मानसिक प्रवृत्तियो से अलग करने की कोशिश करेगे। किन्तु पिछले पॉच महीने की घटनाओ ने साबित कर दिया कि अभी इस तरह की आशा करने का समय नही आया और जिस दौर के विषय मे दुनिया को विश्वास दिलाया जा रहा है कि वह समाप्त हो चुका वह वास्तव मे अभी जारी है।

जो भी हो, हमारी समस्याएँ चाहे किसी तरह भी पैदा हुई हो, हम स्वीकार करते है कि दुनिया के और सब मुल्को की तरह हिन्दुस्तान के सामने भी अपने अन्दर की समस्याएँ है और इन समस्याओ मे एक खास समस्या साम्प्रदायिक समस्या यानी फिरकेवाराना मसला है। हम ब्रिटिश हुकूमत से यह आशा नही रखते और न हमे आशा रखनी चाहिये कि वह इस मसले के अस्तित्व को नजर अन्दाज करेगी। यह मसला है, और अगर हम आगे बढना चाहते है तो हमारा फर्ज है कि इसके अस्तित्व को मानकर कदम उठाए। हम स्वीकार करते है कि हर कदम जो हम इस समस्या की ओर से बेपरवाह होकर उठाएगे निस्सदेह गलत कदम होगा। लेकिन फिरकेवाराना मसले के अस्तित्व को स्वीकार करना एक अलग बात है। इसका यह मतलब नही होना चाहिये कि इस मसले को हिन्दुस्तान के कौमी हक, यानी हमारे राष्ट्रीय अधिकार, के खिलाफ एक शस्त्र की तरह काम मे लाया जावे। ब्रिटिश साम्राज्यशाही इस मसले से हमेशा यही गलत काम लेती रही है। यदि अब वह अपने भारतीय इतिहास का पिछला दौर खत्म करना चाहती है तो उसे जानना चाहिये कि सबसे पहली बात जिसमे हम कुदरती तौर पर इस तब्दीली की झलक देखना चाहते है वह इसी मसले मे उसका रवइया है।

कॉग्रेस ने साम्प्रदायिक समस्या के बारे मे अपने लिये जो जगह बनाई है वह क्या है? कॉग्रेस का पहले दिन से दावा रहा है कि वह सारे हिन्दुस्तान को समष्टि रूप से अपने सामने रखती है और जो कदम भी उठाना चाहती है पूरी हिन्दुस्तानी कौम के नाम पर और उसी के लिये उठाना चाहती है। हम

स्वीकार करते है कि कॉग्रेस ने यह दावा करके दुनिया को इस बात का अधिकार दे दिया है कि वह जितनी बेरहमी के साथ चाहे कॉग्रेस के दोष निकाले और इस बारे मे काग्रेस के तर्जे अमल को परखे और काग्रेस का कर्त्तव्य है कि इस तरह की परख मे अपने को कामयाब साबित करे। मै चाहता हूँ कि इस सवाल का यह पहलू सामने रखकर हम आज काग्रेस के तर्जे अमल पर नए सिरे से निगाह डाले।

मै अभी आपसे कह चुका हूँ कि इस बारे मे कुदरती तौर पर तीन बाते सामने आ सकती है,—साम्प्रदायिक समस्या का अस्तित्व, उसका महत्त्व और उसके फैसले का ढग या तरीका।

कॉग्रेस का पूरा इतिहास इस बात की गवाही देता है कि उसने इस मसले के अस्तित्व को हमेशा स्वीकार किया है। उसने इसके महत्त्व को घटाने की भी कभी कोशिश नही की। इसके फैसले के लिये काग्रेस ने वही तरीका इस्तेमाल किया जिससे ज्यादा सन्तोषजनक तरीका इस बारे मे कोई नही बतलाया जा सकता। और यदि बतलाया जा सकता है तो उसे अपनाने मे काग्रेस के दोनो हाथ हमेशा बढे रहे है और आज भी बढे हुए है।

इस मसले के महत्त्व को समझने का हमारे ऊपर इससे ज्यादा क्या असर हो सकता था कि उसके हल को हम हिन्दुस्तान के कौमी मकसद, उसके राष्ट्रीय लक्ष्य की सफलता के लिये सबसे पहली शर्त स्वीकार करे। मै इस बात को एक ऐसी सच्चाई के तौर पर पेश कर रहा हूँ जिससे कोई इनकार नही कर सकता कि कॉग्रेस का हमेशा यही अकीदा, यही विश्वास रहा है।

कॉग्रेस ने इस बारे मे हमेशा दो बुनियादी उसूल अपने सामने रखे है और जब कभी कोई कदम उठाया तो इन दोनो उसूलो को साफ साफ और पूरी तरह मान कर उठाया—

(१) पहला यह कि हिन्दुस्तान का जो भी कान्स्टीटयूशन, शासन विधान या दस्तूरे असासी आइन्दा बनाया जावे उसमे अल्पसख्यक जातियो के हक़ो और हितो की पूरी जमानत होनी चाहिये।

(२) दूसरा यह कि अल्पसख्यक जातियो के हको और हितो के लिये किन किन सरक्षणो यानी 'सेफगार्ड्स' की ज़रूरत है, इस बात का फैसला स्वय अल्पसख्यक जातियाँ ही करेगी, बहुसख्यक जातियाँ नही करेगी। इसलिये सरक्षणो का फैसला अल्पसख्यक जातियो की रजामन्दी से होना चाहिये।

अल्पसख्यक जातियो का प्रश्न केवल हिन्दुस्तान ही की कोई विशेषता नही है। दुनिया के दूसरे हिस्सो मे भी यह प्रश्न रह चुका है। मै आज इस जगह से दुनिया को मुखातिब करने का साहस करता हूँ। मै जानना चाहता हूँ कि क्या इससे भी ज्यादा कोई साफ और बेलाग तर्जे अमल इस बारे मे अख्ति-यार किया जा सकता है? अगर किया जा सकता है तो वह क्या है? क्या इस तर्जे अमल मे कोई भी ऐसी कमी रह गई है जिसकी बिना पर कॉग्रेस को उसका कर्त्तव्य याद दिलाने की जरूरत हो? कॉग्रेस अपने कर्त्तव्य-पालन की कमियो पर गौर करने के लिये सदा तैयार रही है और आज भी तैयार है।

मै १९ वर्ष से कॉग्रेस मे हूँ। इस तमाम अरसे मे कॉग्रेस का कोई महत्त्व-पूर्ण फैसला ऐसा नही हुआ जिसके तरतीब देने मे मुझे शरीक होने की इज्जत हासिल न रही हो। मै कह सकता हूँ कि इस १९ वर्ष मे एक दिन भी ऐसा नही गुजरा जब कॉग्रेस ने इस मसले का फैसला इसके सिवा और किसी भी तरीके से करने का ख़याल तक किया हो। यह न केवल कॉग्रेस का एलान ही था बल्कि उसका पक्का और निश्चित मार्ग था। पिछले १५ साल के अन्दर बार बार इस मार्ग मे कडी से कडी परीक्षाए उसके सामने आई। किन्तु यह चट्टान अपनी जगह से कभी न हिल सकी।

आज भी कॉग्रेस ने कास्टिटुएण्ट असेम्बली के सिलसिले मे (यानी सारे देश की उस बडी पचायत के सिलसिले मे जिसके लिये सदस्य चुनने का हर बालिग हिन्दुस्तानी को हक होगा) इस मसले को जिस तरह हल किया है वह इस बात के लिये काफी है कि ऊपर के दोनो उसूलो को उनकी ज्यादा से ज्यादा साफ शक्ल मे देख लिया जाय। मानी हुई अल्पसख्यक जातियो को यह हक

हासिल है कि वह यदि चाहे तो सिर्फ अपनी वोटो से अपने नुमाइन्दो को चुन कर भेजे। उनके नुमाइन्दो के कन्धो पर अपने फिरके के वोटों के सिवाय और किसी की वोटो का बोझ न होगा। जहाँ तक अल्पसख्यक जातियो के हको या हितो का सवाल है उनका फैसला असेम्बली के बहुमत से नही होगा बल्कि खुद अल्पसख्यक जातियो की रजामन्दी से होगा, और अगर किसी मसले मे इत्तफाक न हो सकेगा तो किसी ऐसी निष्पक्ष पचायत के जरिये फैसला कराया जा सकता है जिसे अल्पसख्यक जातियो ने भी स्वीकार कर लिया हो।

आखिरी बात यानी निष्पक्ष पचायत की तजवीज केवल एक अहतियाती पेशबन्दी है। नही तो इस बात की बहुत कम सभावना है कि इसकी जरूरत तक हो। यदि इसकी जगह कोई दूसरी मुनासिब तजवीज सुझाई जा सके तो उसे अख्तियार किया जा सकता है।

यदि काग्रेस ने अपने तर्जे अमल के लिये यह असूल सामने रख लिये है और उन असूलो पर कायम रहने की काग्रेस पूरी कोशिश कर चुकी है और कर रही है तो फिर इसके बाद कौन सी चीज रह गई है जो ब्रिटिश राजनीतिज्ञो को इस बात पर मजबूर करती है कि वे हमे बार बार अल्पसख्यक जातियो के हको के मसले की याद दिलाएँ और दुनिया को इस भ्रान्ति मे डाले कि हिन्दुस्तान के मसले के रास्ते मे अल्प सख्यक जातियो का मसला एक रुकावट पेश कर रहा है ? यदि वास्तव मे इसी मसले की वजह से रुकावट पेश आ रही है तो क्यो ब्रिटिश हुकूमत हिन्दुस्तान के राजनैतिक भाग्य का साफ साफ एलान करके हमे इसका मौका नही दे देती कि हम सब मिलकर बैठे और आपसी रजामन्दी से इस मसले का हमेशा के लिये फैसला कर ले ?

हममे तफरके पैदा किये गए और हमे इलजाम दिया जाता है कि हममे तफरके है। हमे तफरको के मिटाने का मौका नही दिया जाता और हमसे कहा जाता है कि हमे तफरके मिटाने चाहिये !

यह परिस्थिति है जो हमारे चारो ओर पैदा कर दी गई है। ये बन्धन है जो हमे हर तरफ से जकडे हुए है। किन्तु इस तरह की कोई भी दिक्कत या

दुशवारी हमे इससे नही रोक सकती कि हम कोशिश और हिम्मत का क़दम आगे बढाएँ। हमारा सारा मार्ग ही दुशवारियो का मार्ग है और हमे हर दुशवारी पर विजय प्राप्त करनी है।

हिन्दुस्तान के मुसलमान और हिन्दुस्तान का भविष्य

यह हिन्दुस्तान की अल्पसख्यक जातियो का मसला था। लेकिन क्या हिन्दुस्तान मे मुसलमानो की हैसियत एक ऐसी अल्प सख्यक जाति की हैसियत है जो अपने भविष्य को भय और आशका की नज़र से देख सकती है और वे तमाम शकाएँ अपने सामने ला सकती है जो कुदरती तौर पर एक अल्पसख्यक जाति के मस्तिष्क को बेचैन कर देती है ?

मुझे नही मालूम आप लोगो मे कितने आदमी ऐसे है जिनकी नजर से मेरे वे लेख गुजर चुके है जो आज से २८ साल पहले मै "अल हिलाल" के पृष्ठो पर लिखता रहा हूँ। यदि कुछ लोग भी ऐसे मौजूद है तो मै उनसे प्रार्थना करूँगा कि वे अपनी याद ताजा कर ले। मैने उस जमाने मे भी अपना यह विश्वास प्रकट किया था और उसी तरह आज भी करना चाहता हूँ कि हिन्दुस्तान की राजनैतिक समस्याओ मे कोई भी बात इतनी ज्यादा गलत नही है जितनी यह कि हिन्दुस्तान के मुसलमानो की हैसियत राजनैतिक दृष्टि से एक अल्पसख्यक जाति की हैसियत है, और इसलिये उन्हे आज़ाद और जम्हूरी यानी जनतत्रात्मक हिन्दुस्तान मे अपने हको और हितो की ओर से सशक रहने की जरूरत है। इस एक बुनियादी गलती ने बेशुमार गलत फहमियो के पैदा होने का दरवाजा खोल दिया। गलत बुनियादो पर गलत दीवारे चुनी जाने लगी। नतीजा यह हुआ कि एक तरफ तो खुद मुसलमानो को अपनी असली हैसियत के बारे मे सदेह होने लगा और दूसरी तरफ दुनिया एक ऐसी गलत फहमी मे पड गई जिसके बाद वह हिन्दुस्तान और उसकी वर्तमान परिस्थिति को ठीक ठीक नही देख सकती।

यदि समय होता तो मै आपको विस्तार के साथ बताता कि इस मामले की

यह गलत और बनावटी शक्ल पिछले साठ बरस के अन्दर क्योकर ढाली गई और किन हाथो ने उसे ढाला ! वास्तव मे यह भी उसी फूट डालने वाली पालिसी की उपज है जिसका नक्शा इण्डियन नैशनल काग्रेस की तहरीक के शुरू होने के बाद हिन्दुस्तान के सरकारी दिमागो मे बनना शुरू हो गया था और जिसका उद्देश यह था कि मुसलमानो को इस नई राजनैतिक जागृति के विरुद्ध इस्तेमाल करने के लिये तैयार किया जाय । इस नक्शे मे दो बाते खास तौर पर उभारी गई थी । एक यह कि हिन्दुस्तान मे दो अलग अलग कौमे आबाद है । एक हिन्दू कौम है और एक मुसलमान कौम है । इसलिये हिन्दुस्तान के लोग मुत्तहिदा कौमीयत यानी सयुक्त राष्ट्रीयता के नाम पर कोई मतालबा यानी मॉग पेश नही कर सकते । दूसरी यह कि मुसलमानो की तादाद हिन्दुओ के मुकाबले मे बहुत कम है इसलिये यहॉ जनतत्रात्मक सस्थाओ (डेमोक्रेटिक इन्स्टिटचूशन्स) के कायम होने का जरूरी नतीजा यह होगा कि बहुसख्यक हिन्दुओ की हुकूमत कायम हो जायगी और मुसलमानो का अस्तित्व खतरे मे पड जायगा । मै इस वक्त और ज्यादा विस्तार मे नही जाऊँगा । मै आपको सिर्फ इतनी बात याद दिला दूँगा कि यदि इस मामले का शुरू का इतिहास मालूम करना चाहते है तो आपको हिन्दुस्तान के एक पिछले वायसराय लार्ड डफरिन और पश्चिमोत्तर प्रान्त के, जिसे अब सयुक्त प्रान्त कहते है, एक पिछले लेफ्टेनेण्ट गवर्नर सर आकलैण्ड कालविन के जमाने की तरफ लौटना चाहिये ।

ब्रिटिश साम्राज्य ने हिन्दुस्तान की सर जमीन मे समय समय पर जो बीज बोए उनमे से एक बीज यह था । इसमे तुरन्त फूल पत्ते फूट आए और यद्यपि पचास साल बीत चुके फिर भी अभी तक इसकी जडो की नमी खुश्क नही हुई !

राजनैतिक भाषा मे जब कभी 'अल्पसख्यक जाति', 'अकल्लियत' या 'माइनारिटी' ये शब्द बोले जाते है तो इनका यह मतलब नही होता कि मामूली गणित के हिसाब के कायदे से मनुष्यो की हर ऐसी सख्या जो एक दूसरी सख्या से कम हो ज़रूरी तौर पर 'माइनारिटी' होती है और उसे अपनी रक्षा की ओर से आशका या घबराहट होनी चाहिये। बल्कि इन शब्दो से मतलब एक ऐसी

कमज़ोर जमाअ़त का है जो तादाद और सलाहियत यानी सख्या और क्षमता दोनो की दृष्टि से अपने को इस योग्य नही पाती कि एक बडे और ताकतवर गिरोह के साथ रहकर अपनी रक्षा के लिये खुद अपने ऊपर भरोसा कर सके। इसके लिये केवल यही काफी नही है कि एक गिरोह सख्या मे दूसरे गिरोह से कम हो बल्कि यह भी जरूरी है कि उसकी अपनी सख्या खुद भी कम हो और इतनी कम हो कि उससे अपनी रक्षा की आशा न की जा सके। सख्या यानी नबरो के साथ साथ इसमे उस गिरोह की अपनी विशेषता का सवाल भी काम करता है। फर्ज़ कीजिये एक मुल्क मे दो गिरोह मौजूद है, एक की सख्या एक करोड है दूसरे की दो करोड। अब एक करोड दो करोड़ का आधा है और दो करोड से कम है मगर राजनैतिक दृष्टि से यह आवश्यक नही है कि केवल इसी अनुपात के फर्क की बिना पर हम उसे एक माइनारिटी फर्ज करके उसके अस्तित्व को कमज़ोर स्वीकार कर ले। इस तरह की माइनारिटी या अल्पसख्यक जाति होने के लिये सख्या के अनुपात के फर्क के साथ साथ दूसरी बातो का होना भी जरूरी है।

अब जरा गौर कीजिये कि इस दृष्टि से हिन्दुस्तान मे मुसलमानो की असली हैसियत क्या है ? आपको देर तक गौर करने की जरूरत न होगी। आप केवल एक निगाह मे देख लेगे कि आपके सामने एक बहुत बड़ा गिरोह अपनी इतनी बडी और फैली हुई सख्या के साथ सर उठाए खडा है कि उसके विषय मे माइ-नारिटी या 'अल्पसख्या' की कमज़ोरियो का गुमान भी करना अपनी निगाह को साफ धोखा देना है।

उसकी सख्या इस देश मे सब मिलाकर आठ से नौ करोड के अन्दर है। यह सख्या देश की दूसरी जमाअ़तो की तरह पेशो के लिहाज से और पैतृक दृष्टि से टुकडो या ज़ातो मे बॅटी हुई नही है। इसलामी जिन्दगी के समता के असूल ने और इसलाम की बिरादराना यकजेहती के मज़बूत रिश्ते ने इस सख्या को पेशो के तफरको की कमजोरियो से बहुत दरजे तक बचा रखा है। यह सच है कि यह सख्या मुल्क की पूरी आबादी का एक चौथाई से ज्यादा नही है, लेकिन सवाल सख्या के अनुपात का नही है बल्कि खुद सख्या या उसकी विशेषता का है। क्या

मनुष्यो की इतनी बडी सख्या के लिये इस तरह की आशकाओ की कोई जायज वजह हो सकती है कि वह एक स्वाधीन और जनतत्रात्मक (डेमोक्रेटिक) हिन्दुस्तान मे अपने हको या हितो की खुद रक्षा न कर सकेगी ?

यह सख्या मुल्क के किसी एक हिस्से मे सिमटी हुई नही है बल्कि एक खास बटवारे के साथ मुल्क के मुख्तलिफ हिस्सो मे फैली हुई है। हिन्दुस्तान के ११ प्रान्तो मे से चार ऐसे है जिनमे मुसलमानो की सख्या ज्यादा है यानी जहाँ उनकी 'अक्सरीयत' यानी मेजारिटी है और जहाँ दूसरी मजहबी जमाअते अल्पसख्या यानी माइनारिटी मे है। यदि इसमे ब्रिटिश बलूचिस्तान को भी जोड लिया जावे तो चार की जगह मुसलिम 'अक्सरीयत' के पाँच प्रान्त हो जायँगे। यदि हम अभी इस बात के लिये मजबूर है कि मजहबी तफरके की बिना पर ही 'मेजा-रिटी' और 'माइनारिटी' की कल्पना करते रहे तो भी इस कल्पना मे मुसल-मानो की जगह केवल एक 'माइनारिटी' की देखाई नही देती। वह अगर सात सूबो मे माइनारिटी की हैसियत रखते है तो पाँच सूबो मे उन्हे मेजारिटी की जगह हासिल है। ऐसी स्थिति मे कोई कारण नही कि उन्हे एक माइनारिटी ग्रूप होने का खयाल बेचैन करे।

हिन्दुस्तान का भावी कान्स्टीटच्यूशन यानी शासन विधान और बातो मे चाहे कैसा भी हो मगर उसकी एक बात हम सबको मालूम है। वह यह कि वह विधान पूरे अर्थो मे एक आल इडिया फेडरेशन का जनतत्रात्मक विधान होगा जिसके तमाम अलग अलग हलके या यूनिट अपने अपने भीतरी मामलो मे खुद-मुख्तार होगे और फेडरल केन्द्र के सपुर्द केवल वही मामले रहेगे जिनका सबध सारे देश के व्यापक और सयुक्त प्रश्नो से होगा—मिसाल के लिये दूसरे देशो के साथ सबध (फारन अफेयर्स), देश-रक्षा (डिफेन्स), जहाजी चुगी (कस्टम) वगैरह। ऐसी हालत मे क्या यह मुमकिन है कि कोई भी समझदार आदमी जो किसी जनतत्रात्मक विधान के पूरी तरह अमल मे आने और चलने का नक्शा थोडी देर के लिये भी अपने सामने ला सकता हो उन आशकाओ को स्वीकार करने के लिये तैयार होगा जिन्हे मेजारिटी और माइनारिटी के इस फरेब से

भरे हुए सवाल ने पैदा करने की कोशिश की है ? मै एक क्षण के लिये भी यह विश्वास नही कर सकता कि हिन्दुस्तान के भावी चित्र मे इन आशकाओ के लिये कोई जगह निकल सकती है। वास्तव मे ये सब आशकाएँ इसलिये पैदा हो रही है कि एक ब्रिटिश नीतिज्ञ के मशहूर शब्दो मे जो, उसने आयरलैण्ड के विषय मे कहे थे, हम अभी तक दरिया के किनारे पर खडे है। और यद्यपि तैरना चाहते है मगर दरिया मे नही उतरते। इन आशकाओ का केवल एक ही इलाज है वह यह कि हमे दरिया मे नि शक और निर्भय होकर कूद पडना चाहिये। ज्योही हमने ऐसा किया हम मालूम कर लेगे कि हमारी तमाम आशकाएँ बे-बुनियाद और निस्सार थी।

हिन्दुस्तान के मुसलमानों के लिये एक बुनियादी सवाल

लगभग तीस बरस हुए मैने एक हिन्दुस्तानी मुसलमान की हैसियत से इस मसले पर पहली बार गौर करने की कोशिश की थी। यह वह ज़माना था जबकि मुसलमानो की बहुत बडी तादाद राजनैतिक सघर्ष के मैदान से बिलकुल तटस्थ थी और आम तौर पर वही विचार चारो ओर छाए हुए थे जिनकी वजह से कुछ मुसलमानो ने सन् १८८८ मे काग्रेस से अलहदा रहने और उसकी मुखालफत करने का इरादा कर लिया था। उस समय की यह आम हवा मेरे सोच विचार की राह न रोक सकी। मै बहुत जल्दी एक आखिरी नतीजे तक पहुँच गया, जिसने मेरे सामने विश्वास और व्यवहार, दोनो का मार्ग खोल दिया। मैने देखा कि हिन्दुस्तान अपनी सारी परिस्थिति के साथ हमारे सामने मौजद है और अपने भविष्य की ओर बढ रहा है। हम भी इसी किश्ती मे सवार है और उसकी चाल से बेपरवाह नही रह सकते। इसलिये ज़रूरी है, कि हम अपने व्यवहार यानी अपने तर्जे अमल का एक साफ और अन्तिम फैसला कर ले। यह फैसला हम क्योकर कर सकते है ? केवल इस तरह कि हम मामले की ऊपरी सतह पर ही न रहे बल्कि उसकी बुनियादो तक पहुँचने की कोशिश करे और

फिर देखे कि हम अपने आपको किस हालत मे पाते है। मैने ऐसा ही किया और देखा कि इस सारे मामले का फैसला केवल एक सवाल के जवाब पर निर्भर है। वह सवाल यह है कि हम हिन्दुस्तानी मुसलमान हिन्दुस्तान के स्वाधीन भविष्य को आशका और अविश्वास की दृष्टि से देखते है या हिम्मत और आत्म विश्वास की दृष्टि से ? यदि पहली सूरत है तो निस्सदेह हमारा मार्ग बिलकुल दूसरा हो जाता है। समय का कोई एलान, भविष्य के लिये कोई वादा, या विधान का कोई सरक्षण फिर हमारी आशका और हमारे भय का वास्तविक इलाज नही हो सकता। हम मजबूर हो जाते है कि किसी तीसरी ताकत की मौजूदगी बरदाश्त करे। यह तीसरी ताकत मौजूद है और अपनी जगह छोडने के लिये तैयार नही है और हमे भी यही ख्वाहिश रखनी चाहिये कि वह अपनी जगह न छोड सके। किन्तु यदि इसके खिलाफ हम यह महसूस करते है कि हमारे लिये भय और आशका की कोई वजह नही, हमे हिम्मत और आत्म विश्वास की दृष्टि से भविष्य की ओर देखना चाहिये तो फिर हमारे कर्तव्य का मार्ग बिलकुल साफ हो जाता है। हम फिर अपने आपको बिलकुल एक दूसरी दुनिया मे पाने लगते है जहाँ आशका, द्विविधा, अकर्मण्यता और प्रतीक्षा की परछाही भी नही पड सकती; विश्वास, दृढता, कर्त्तव्यपालन और सरगरमी का सूरज जहाँ कभी नही डूब सकता, वक्त का कोई उलझाव, परिस्थिति का कोई उतार चढाव, मामलो की कोई चुभन हमारे कदमो का रुख नही बदल सकती। फिर हमारा कर्त्तव्य हो जाता है कि हिन्दुस्तान के राष्ट्रीय लक्ष्य के मार्ग मे कदम उठाए आगे को बढे चले।

मुझे इस सवाल का जवाब मालूम करने मे जरा भी देर नही लगी। मेरे दिल के एक एक तार एक एक रेशे ने पहली हालत से इनकार किया। मेरे लिये असभव था कि इसकी कल्पना भी कर सकूँ। मै किसी मुसलमान के लिये, बशर्ते कि उसने इसलाम की रूह को, उसकी आत्मा को, अपने दिल के एक एक कोन से ढूँढकर निकाल न फेका हो, यह मुमकिन नही समझता कि वह अपने को पहली हालत मे देखना बरदाश्त कर सके।

मैने सन् १९१२ मे 'अलहिलाल' जारी किया और अपना यह फैसला मुसलमानो के सामने रक्खा। आपको यह याद दिलाने की आवश्यकता नही है कि मेरी आवाज खाली नही गई। सन् १९१२ से १९१६ तक का जमाना हिन्दुस्तान के मुसलमानो की नई राजनैतिक करवट का जमाना था। सन् १९२० के आखीर मे जब चार बरस की नजरबन्दी के बाद मै रिहा हुआ तो मैने देखा कि मुसलमानो के राजनैतिक विचार अपना पिछला साँचा तोड चुके है और नया साँचा ढल रहा है। इस घटना को अब बीस बरस गुजर चुके। इस अरसे मे तरह तरह के उतार चढाव होते रहे। घटनाओ की नई नई बाढे आई। विचारो की नई नई लहरे उठी। किन्तु एक हकीकत बिना किसी परिवर्तन के अब तक कायम है। मुसलमानो की आम राय पीछे लौटने के लिये तैयार नही है।

हाँ, वह अब पीछे लौटने के लिये तैयार नही है। लेकिन आगे बढने के मार्ग के विषय मे उसको फिर सदेह हो रहा है। मै इस समय इस परिस्थिति के कारणो पर बहस न करूँगा। मै केवल नतीजे देखने की कोशिश करूँगा। मै अपने हम मजहबो को याद दिलाऊँगा कि सन् १९१२ मे मैने जिस जगह से उन्हे मुखातिब किया था आज भी मै उसी जगह खडा हूँ। इस तमाम बीच के समय ने स्थितियो का जो ढेर हमारे सामने खडा कर दिया है उनमे कोई स्थिति ऐसी नही जो मेरे सामने से न गुजरी हो। मेरी आँखो ने देखने मे और मेरे दिमाग ने सोचने मे कभी कसर नही की। स्थितियाँ केवल मेरे सामने से गुजरी ही नही है मै उनके अन्दर खडा रहा हूँ और मैने एक एक स्थिति को जाँचा और पडताला है। मै मजबूर हूँ कि मै अपनी आँखो से देखे हुए और अपनी अक्ल से समझे हुए को न झुठलाऊँ।

मेरे लिये असभव है कि अपने विश्वास से लड सकूँ। मै अपनी अन्तरात्मा की आवाज को नही दबा सकता। मै इस तमाम अरसे मे उनसे कहता रहा हूँ और आज भी उनसे कहता हूँ कि हिन्दुस्तान के नौ करोड मुसलमानो के लिये केवल एक यही कर्त्तव्यपथ हो सकता है जिसकी ओर मैने उन्हे सन १९१२ मे दावत दी थी।

मेरे जिन हम मजहबो ने सन् १९१२ मे मेरी बात को अपनाया था लेकिन आज जिन्हे मुझसे मतभेद है उन्हे मै इसके लिये बुरा नही कहूँगा। किन्तु मै उनसे अपील करूँगा कि वे इस प्रश्न पर निष्पक्ष होकर और गभीरता के साथ विचार करे। यह कौमो और मुल्को की किस्मतो का मामला है। हम इसे समय की क्षणिक भावनाओ के बहाव मे बहकर तय नही कर सकते। हमे जिन्दगी की ठोस हकीकतो की बिना पर अपने फैसलो की दीवारे तामीर करनी है। ऐसी दीवारे रोज बनाई और रोज ढाई नही जा सकती। मै स्वीकार करता हूँ कि बदकिस्मती से वायुमण्डल इस समय गर्द से भरा हुआ है। मगर उन्हे हकीकत की रोशनी मे आना चाहिये। वह आज भी हर पहलू से मामले पर गौर कर ले। वह इस नतीजे पर पहुँचेगे कि कर्त्तव्य का उनके सामने कोई दूसरा मार्ग नही है।

मुसलमान और संयुक्त राष्ट्रीयता

मै मुसलमान हूँ और गर्व के साथ अनुभव करता हूँ कि मुसलमान हूँ। इसलाम की तेरह सौ बरस की शानदार रिवायते मेरी पैतृक सपत्ति है। मै तैयार नही हूँ कि इसका कोई छोटे से छोटा हिस्सा भी नष्ट होने दूँ। इसलाम की तालीम, इसलाम का इतिहास, इसलाम के इल्म और फन और इसलाम की तहजीब मेरी पूँजी है और मेरा फर्ज है कि उसकी रक्षा करूँ। मुसलमान होने की हैसियत से मै अपने मजहबी और कलचरल दायरे मे अपना एक खास अस्तित्व रखता हूँ और मै बरदाश्त नही कर सकता कि इसमे कोई हस्तक्षेप करे। किन्तु इन तमाम भावनाओ के अलावा मेरे अन्दर एक और भावना भी है जिसे मेरी जिन्दगी की 'रिएलिटीज' यानी हकीकतो ने पैदा किया है। इसलाम की आत्मा मुझे उससे नही रोकती, बल्कि मेरा मार्ग प्रदर्शन करती है। मै अभिमान के साथ अनुभव करता हूँ कि मै हिन्दुस्तानी हूँ। मै हिन्दुस्तान की अविभिन्न सयुक्त राष्ट्रीयता (नाकाबिले तकसीम मुत्तहिदा कौमीयत) का एक

अश हूँ। मै इस सयुक्त राष्ट्रीयता का एक ऐसा महवत्त्पूर्ण अश हूँ, उसका एक ऐसा टुकडा हूँ जिसके बिना उसका महत्त्व अधूरा रह जाता है। मै इसकी बनावट का एक ज़रूरी हिस्सा हूँ। मै अपने इस दावे से कभी दस्तबरदार नही हो सकता।

हिन्दुस्तान के लिये प्रकृति का यह फैसला हो चुका था कि इस सर ज़मीन मे मनुष्य की मुख्तलिफ नसलो, मुख्तलिफ सभ्यताओ और मुख्तलिफ धर्मो के काफले का सम्मिलन हो। अभी मानव इतिहास का प्रभात भी न हुआ था कि इन काफलो का यहाँ आना शुरू होगया और फिर एक के बाद एक, सिलसिला जारी रहा। हिन्दुस्तान की विशाल सर जमीन सबका स्वागत करती रही और इस उदार भूमि की गोद मे सबको जगह मिली। इन्ही काफलो मे एक आखिरी काफला हम मुसलमानो का भी था। यह भी पिछले काफलो के पदचिह्नो पर चलता हुआ यहाँ पहुँचा और हमेशा के लिये बस गया। यह दुनिया की दो अलग अलग कौमो और तहज़ीबो की धाराओ का मिलन था। यह गगा और जमुना की धाराओ की तरह पहले एक दूसरे से अलग अलग बहते रहे, लेकिन फिर प्रकृति के अटल नियम के अनुसार दोनो को एक ही सगम मे मिल जाना पडा। इन दोनो का मेल इतिहास की एक जबरदस्त घटना थी। जिस दिन यह घटना हुई उमी दिन से प्रकृति के छिपे हुए हाथो ने पुराने हिन्दुस्तान की जगह एक नए हिन्दुस्तान के ढालने का काम शुरू कर दिया।

हम अपने साथ अपनी पूँजी लाए थे और यह सर ज़मीन भी अपनी पूँजी से मालामाल थी। हमने अपनी दौलत इसके हवाले कर दी और उसने अपने खजानो के दरवाजे हम पर खोल दिये। हमने उसे इसलाम की पूँजी की वह सबसे ज्यादा कीमती चीज दे दी जिसकी उसे उस समय सबसे ज्यादा जरूरत थी। हमने उसे जम्हूरियत और इनसानी मसावात यानी जनतत्र और मानव एकता का सन्देश पहुँचा दिया।

इतिहास की पूरी ११ सदियाँ इस घटना पर बीत चुकी है। अब इसलाम भी इस सर जमीन पर वैसा ही दावा रखता है जैसा दावा हिन्दू धर्म रखता है। अगर हिन्दू धर्म कई हजार साल से इस सर जमीन के बाशिन्दो का धर्म रहा है

तो इसलाम भी एक हजार बरस से इसके बाशिन्दो का मजहब चला आता है। जिस तरह आज एक हिन्दू अभिमान के साथ कह सकता है कि वह हिन्दुस्तानी है और हिन्दू मज़हब का माननेवाला है ठीक उसी तरह हम भी अभिमान के साथ कह सकते है कि हम हिन्दुस्तानी है और इसलाम मजहब के माननेवाले है। मै इस क्षेत्र को इससे भी ज्यादा बढाऊँगा। मसलन मै एक हिन्दुस्तानी ईसाई का भी यह अधिकार स्वीकार करता हूँ कि वह आज सर उठाकर कह सकता है कि मै हिन्दुस्तानी हूँ और हिन्दुस्तान के बाशिन्दो के एक मजहब यानी ईसाई मजहब का माननेवाला हूँ।

हमारे ११ सदियो के मिले जुले इतिहास ने हमारी हिन्दुस्तानी जिन्दगी के एक एक कोने को अपने तामीरी सामानो यानी अपनी रचनात्मक सामग्री से भर दिया है। हमारी भाषाएँ, हमारी शायरी, हमारा साहित्य, हमारा सामाजिक जीवन, हमारी रुचि, हमारे शौक, हमारा लिबास, हमारे रस्म रिवाज, हमारे दैनिक जीवन की बेशुमार हकीकते, कोई कोना भी ऐसा नही है जिस पर इस सयुक्त जीवन की छाप न लग चुकी हो। हमारी बोलियाँ अलग अलग थी मगर हम एक ही जबान बोलने लगे। हमारे रस्म रिवाज एक दूसरे से जुदा थे मगर उन्होने मिलजुल कर एक नया साँचा पैदा कर लिया। हमारा पुराना लिबास इतिहास के पुराने चित्रो मे देखा जा सकता है मगर अब वह हमारे बदन पर नही मिल सकता। यह तमाम मिलीजुली पूँजी हमारी सयुक्त राष्ट्रीयता की एक दौलत है और हम इसे छोडकर उस जमाने की तरफ लौटना नही चाहते जब हमारी यह मिलीजुली जिन्दगी शुरू नही हुई थी। हममे यदि ऐसे हिन्दू मस्तिष्क मौजूद है जो चाहते है कि एक हजार साल पहले का हिन्दू जीवन वापस ले आये तो उन्हे मालूम होना चाहिये कि वे एक स्वप्न देख रहे है जो कभी पूरा होने वाला नही है। इसी तरह अगर ऐसे मुसलमान दिमाग मौजूद है जो चाहते है कि अपनी उस बीती हुई तहजीब और समाजी जिन्दगी को फिर ताजा करे जो वह एक हजार साल पहले ईरान और मध्य एशिया से लाए थे तो मै उनसे भी कहूँगा कि इस स्वप्न से वह जितनी जल्दी

जाग जायें बेहतर है, क्योंकि यह एक अप्राकृतिक कल्पना, एक गैर कुदरती तखय्युल है और इस तरह के खयालात वास्तविकता की जमीन मे नही उग सकते। मै उन लोगो मे हूँ जिनका विश्वास है कि पुरानी चीजो को फिर से ताजा करने की, यानी रिवाइवलिज्म की, जरूरत मजहब के मैदान मे है, लेकिन समाजी जिन्दगी मे रीवाइवलिज्म का मतलब तरक्की से इनकार करना है। हमारे इस एक हजार साल के मिलेजुले जीवन ने एक सयुक्त राष्ट्रीयता, एक मुत्तहिदा कौमीयत, का साँचा ढाल दिया है। इस तरह के साँचे बनाए नही जा सकते, वह प्रकृति के छिपे हुए हाथो से सदियो मे खुद बखुद बना करते है। अब साँचा ढल चुका और भाग्य की मुहर उसपर लग चुकी। हम पसन्द करे या न करे मगर अब हम एक हिन्दुस्तानी कौम और अविभक्त यानी नाकाबिले तकसीम हिन्दुस्तानी कौम बन चुके है। पृथकता की कोई बनावटी कल्पना हमारे इस एक होने को दो नही बना दे सकती। हमे प्रकृति के फैसले पर रजामन्द होना चाहिये और अपने भाग्य की तामीर मे लग जाना चाहिये।

अन्त

सज्जनो! मै आपका अब ज्यादा समय नही लूँगा। मै अब अपनी तकरीर समाप्त करना चाहता हूँ। लेकिन समाप्त करने से पहले मुझे एक बात की याद दिलाने की इजाजत दीजिये। आज हमारी सारी कामयाबियो का दार मदार तीन चीजो पर है, हमारी सफलता इन्ही पर निर्भर है—

इत्तहाद यानी एकता, डिसिप्लिन यानी अनुशासन, और महात्मा गान्धी के नेतृत्व, यानी उनकी रहनुमाई पर पूरा भरोसा। यही एकमात्र नेतृत्व है जिसने हमारे आन्दोलन का पिछला शानदार इतिहास तामीर किया है और केवल इसी से हम एक विजयी भविष्य की आशा कर सकते है।

हमारी परीक्षा का एक नाजुक समय हमारे सामने है। हमने सारी दुनिया की निगाहो को नजारा देखने की दावत दे दी है। कोशिश कीजिये कि हम इसके योग्य साबित हो।